International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 388-390

अमृतलाल नागर कृत नाटक 'युगावतार': कथ्य की पड़ताल एवं प्रासंगिकता

डॉ० दर्शन पाण्डेय

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शिवाजी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

अमृत लाल नागर द्वारा रचित 'युगावतार' तीन अंकों में विभाजित एक मंचीय नाटक है। आलोच्य नाटक का मंचन सन् 1955 में प्रयाग की संस्था रंगवाणी के उद्घाटन के अवसर पर हुआ, जिसका निर्देशन स्वयं नागर जी ने किया। यह नाट्यकृति आधुनिक हिंदी साहित्य के युग प्रवर्तक रचनाकार भारतेंदु हरिश्चन्द्र के व्यक्तित्व एवं जीवन पर आधारित है। जिसमें हरिश्चन्द्र के जीवन के उन पक्षों को दिखाया गया है, जिससे उनकी हिंदी भाषा एवं साहित्य के प्रति समर्पण भाव, समाज के प्रति उत्तरदायित्व तथा सेवा-भाव एवं देश-प्रेम की भावना का प्रकटीकरण होता है।

वस्तुतः नाटक एक दृश्य-श्रव्यमूलक कला है, नाटक को सामाजिक कला भी कहा जाता है। वास्तव में अमृत लाल नागर जी मूलतः कथाकार रहे हैं, उनका चित्त उपन्यास तथा कहानियों में अधिक रमा है, उनकी ख्याति और कीर्ति का आधार भी उनके उपन्यास ही रहे। सवाल उठता है कि वे नाटक की ओर क्यों मुड़े ? वास्तव में यह अनायास नहीं हुआ। बचपन में ही रंगकर्म से उनका परिचय हो गया था। उनके पिता स्वर्गीय राजाराम नागर लखनऊ के शौकिया रंगमंच के आरम्भ करने वाले लोगों में से थे। वहीँ वे नाटक खेला करते थे, जिस कारण बालक अमृत लाल नागर के मन में भी नाटकों के प्रति लगाव पैदा हुआ। युवा नागर जी जब पांचवे दशक में फिल्मों की पटकथा लिखने की आकांक्षा लिए मुंबई आए तो उनका परिचय इप्टा के सदस्यों बलराज साहनी, कामिनी कौशल तथा ख्वाज़ा अहमद अब्बास से हुआ। इसी दौरान 1949 में अमृतलाल नागर जी ने प्रसाद के नाटक 'स्कंदगुप्त' का मंचन किया। तत्पश्चात कई अन्य नाटकों का निर्देशन भी उन्होंने किया। कई वर्षों तक नागर जी 'लखनऊ रंगमंच' नामक संस्था के लिए नाट्य निर्देशन करते रहे। कालान्तर में वे रंगकर्म से थोड़ा अलग हो गए यद्यपि रंग चिंतन चलता रहा। उससे जुड़े सवालों पर बराबर चर्चा करते थे।

अब बात करते हैं आलोच्य नाटक 'युगावतार' की। इसका का कथ्य भारतेंदु हरिश्चन्द्र के जीवन पर आधारित है। हरिश्चन्द्र अग्रवाल वैश्य कुल में उत्पन्न हुए। उनके वंशीय पूर्वजों में सेठ अमीचंद का नाम आता है जिन्होंने लार्ड क्लाइव से संधि की थी, जिस कारण अंग्रेजों को भारत में पैर जमाने में मदद मिली थी। इसी वंश परम्परा में सेठ फतेहचंद काशी में आकर बस गए और नगर सेठ कहलाए। हिंदी का प्रथम नाटक 'नहुष' के रचयिता बाबू गोपालचंद उर्फ़ गिरिधर दास हरिश्चंद के पिता थे, उनकी माता का नाम पार्वती देवी था। रायकृष्ण दास के शब्दों में - "काशी का सर्वोत्तम घराना 'चौधरी घराना' कहलाता था। यह वह घराना था जहाँ अशर्फियाँ छतों पर सुखाई जाती थीं, चोरी न होने पर दुःख माना जाता था। अशर्फियों से लेकर हाथ का लोटा तक दान कर दिया जाता था" इसी रईस खानदान में 9 सितम्बर सन् 1850 को काशी में भारतेंदु हरिश्चन्द्र जन्में थे।

'युगावतार' नाटक में भारतेंदु हरिश्चन्द्र के बाल्यकाल सम्बन्धी जीवन वृत्त पर कोई प्रकाश नहीं डाला गया नाटक का प्रारम्भ दो पुरुष पात्रों मथुरा दास तथा छक्कू जी के संवादों से होता है। दृश्यबंध के रूप में काशी का धार्मिक वातावरण दर्शाने के लिए पार्श्व में भजन का स्वर सुनाई देता है। काशी की संकरी गलियों तथा हवेलियों के बुर्ज और छतों की रूपरेखा का परिचय रंगनिर्देश रूप में दिया गया है। छक्कू और मथुरादास के संवाद से स्पष्ट होता है कि हरिश्चन्द्र द्वारा अपनी पैतृक संपत्ति का अंधाधुंध तरीके से दान करने के कारण उनकी आर्थिक दशा लगातार क्षीण होती जा रही है। इस अपव्यय वृत्ति से तंग आकर हरिश्चन्द्र की नानी सारी संपत्ति उनके भाई गोकुलचंद के नाम कर देती है। हरिश्चंद का गृहस्थ जीवन भी डाँवाडोल है, पति-पत्नी में निभती नहीं है। इन दोनों के संवाद से यह भी पता चलता है कि मल्लिका नामक बंगालिन स्त्री से हरिश्चन्द्र की घनिष्ठता के कारण ही दोनों में तनाव है।

"छक्कू : सुना है कि आजकल बंगाले का जादू बहुत चढ़ल हौ बाबू साहेब पर। का नाम है ऊ बंगालिन का ? मथुरादास: मल्लिका! अरे पर हुआँ एक मल्लिका थौरै हौ। माधवी और फलानी और ढिमाकी रोजै तो नयी-नयी आवथीं।" [1] बालक हरिश्चन्द्र ने जब होश सम्भाला तब तक वे अनेक रईसी आदतों से परिपूर्ण हो चुके थे। पाँच वर्ष में माता का तथा नौ वर्ष में पिता की मृत्यु ने अल्प आयु में ही परिवार के मुखिया का दायित्व निभाना पड़ा। विमाता से कभी नहीं बनी। नैसर्गिक प्रतिभा के धनी थे। बंधन में रहना उन्हें स्वीकार्य नहीं था, स्वभावतः हठी, क्रोधी, जिद्दी तथा स्वच्छंद स्वभाव बनता चला गया। नाटक में नागर जी ने अंक दो के प्रारम्भ में हरिश्चन्द्र के रईसी ठाट-बाट का का निर्देश दिया है, - "हरिश्चन्द्र का बैठक वाला कमरा जाली परदे के पीछे से चमकता है। कमरा रियासती वैभव से भरा-पूरा है। झाड़-फ़ानूस, दीवालगीरी, विक्टोरियाकालीन सोफ़ा और दो कुर्सियां, संगमरमर की मेज़ पर कीमती घड़ी रखी है। बीच में तख़्त पर क़ीमती कालीन बिछा है, गोल तकिए रखे हैं। पास ही पानदान, इत्रदान, शमादान, पीकदान आदि भी क़रीने से रखे हैं।" [2] हरिश्चन्द्र का विवाह काशी के ही निवासी लाला गुलाबराय की सुपुत्री मन्नो देवी से 13 वर्ष की उम्र में हुआ। हरिश्चन्द्र की तीन संतानें हुईं। दो पुत्र और एक पुत्री। किन्तु दोनों ही पुत्र शैशव अवस्था में ही काल-कवलित हो गए, जबकि पुत्री विद्या भी प्रायः बीमार रहती थी। हरिश्चन्द्र की अपनी पत्नी से कभी नहीं बनी। जिसका संकेत इस नाटक में भी मिलता है। नाटक में 'बहूजी' पात्र के रूप में हरिश्चंद की पत्नी का वर्णन है। उनका एक संवाद द्रष्टव्य है- "(तीखा स्वर) अरे अपनों से तो इन्हें जैसे मतलब ही नहीं, बस बाहर वालों को ही सुख देना जानते हैं। (रोना स्वर) हम चाहे मरें या जियें, इन्हें क्या?..... मेरे भाग से दोनों बेटे भी नहीं रहे..... ख़ैर न सही, पर मेरी विद्या तो है। भगवान् चाहेंगे तो उसके बाल-बच्चों से एक दिन हमारे आगे भी उजाला हो जाएगा। मगर इन्हें इसकी क्या पड़ी है। ये तो अपना सब-कुछ लुटाए देते हैं।" [3]

इसके प्रतिउत्तर में हरिश्चन्द्र का यह कथन उनके पुरखों द्वारा प्राप्त संपत्ति के प्रति वितृष्णा को दर्शाता है- "इस धन ने मेरे पुरखों को खा डाला। अब मैं इसे खा रहा हूँ।" [4] संपत्ति को अंधाधुंध उड़ाना परिवार में पत्नी, विमाता, भाई किसी को भी बर्दाश्त नहीं हुआ। जिस कारण पारिवारिक तनाव, मन-मुटाव तथा विघटन बढ़ता गया। नानी और सौतेली माँ द्वारा संपत्ति से बेदख़ल किए जाने तथा भाई से ज़ायदाद का बँटवारा होने के बाद भी हरिश्चन्द्र के खर्चों में कमी नहीं आई। ख़र्च बढ़ता गया साथ ही क़र्ज़ भी। अथाह संपत्ति स्वाहा कर चुके हरिश्चन्द्र की दानशीलता एवं विलासिता गृह-क्लेश का मुख्य कारण थी। भारतेंदु का व्यक्तित्व विरोधाभासी तथा अंतर्विरोधों का समुच्चय कहा जा सकता है। भारतेंदु हरिश्चन्द्र के जीवनीकार बाबू ब्रजरत्न दास के अनुसार,- "भारतेंदु में कबीर वाला फ़क्कडपन और अक्खड़ता, मीरा-सूर वाली भावुकता भरी भक्ति, भूषण का राष्ट्र-प्रेम, देव-बिहारी की श्रृंगार प्रियता और कालान्तर के निराला वाला निरालापन एक साथ समाहित था। उनमें राजा हरिश्चन्द्र की सत्यवादिता और दानशीलता भी डटकर थी तो 'भारत' के प्रति अतिशय प्रेम और इंदु (चन्द्रमा) की शीतलता-स्निग्धता-ज्योतिक्ता और निःसंदेह कलंक भी।" [5] स्वयं

हरिश्चन्द्र ने अपने बारे में जो जाना है, उसका वर्णन नागर जी ने युगावतार में वर्णित किया है-

"सेवक गुनीजन के चाकर चतुर के हैं,
कबिन के मीत चित हित गुनी ज्ञानी के।
सीधेन सों सीधे महा बांके हम बांकेन सों,
हरीचंद नगद दमाद अभिमानी के।।
चाहिबे की चाह, काहू की न परवाह,
नेही, नेह के दिवाने सदा सूरत निवानी के।।
सरबस रसिक के सुदास-दास प्रेमिन के, ।
सखा प्यारे कृष्ण के ग़ुलाम राधारानी के।।" [6]

इसमें संदेह नहीं कि हरिश्चन्द्र का व्यक्तित्व अद्भुत एवं अंतर्विरोधी गुण-अवगुणों से परिपूर्ण था। उनमें अग्नि सदृश क्रोध था तो करुणा एवं दयालुता का अपार सागर भी बहता था। अति की सीमा तक अपव्यय था तो राजा हरिश्चन्द्र की भाँति सर्वस्व दान करने का भाव भी। विलासिता में डूबे तो वेश्याओं के कोठे तक कई दिन बिताते रहे, भक्ति एवं धार्मिकता इतनी की रात-दिन कृष्ण भक्ति में डूबे रहते।

नाटक में हरिश्चंद्र का समाज-सुधारक रूप प्रमुखता से उभरा है। वर्तमान में जिस प्रकार सरकारें लड़कियों की शिक्षा को लेकर विभिन्न प्रकार के अभियान और प्रोप्साहन का कार्य कर रही हैं। 'बेटी बचाओ, बेटी पढाओ' जैसा नारा ऐसा ही प्रयास है। कई राज्य सरकारें भी दसवीं और बारहवीं की परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त करने पर बालिकाओं को आर्थिक पुरस्कार देने की घोषणाएं करती हैं, जिससे उन्हें शिक्षा में बेहतर करने की प्रेरणा तथा प्रोप्साहन मिलता है। इस नाटक में भी हरिश्चन्द्र ऐसा ही महत्वपूर्ण कार्य करते दिखाए गए हैं। वे बालिकाओं और स्त्रियों के कल्याण तथा उत्थान के लिए विविध प्रकार से कर्मशील हैं। युगावतार नाटक के एक प्रसंग में हरिश्चन्द्र का निम्न संवाद अवलोकनीय है,- "हमारा विचार है कि जिन बंगाली बालाओं ने इस वर्ष अंग्रेजी पास की है, उन्हें हमारी ओर से बनारसी साड़ियाँ भेंट दी जाएँ। मुनीम जी, साड़ियाँ खरीदने का प्रबंध कीजिए।" [7] हरिश्चन्द्र इस प्रकार के कार्य को सामाजिक ऋण तथा देश का ऋण मानते हैं। उनका मानना है कि अपने सेवा कार्य द्वारा हमें ऐसे ऋण उतारने चाहिए। एक अन्य स्थल पर भारतेंदु के संवाद द्वारा भारतीय एवं पाश्चात्य फिरंगी औरतों की दशा की ओर भी संकेत किया गया है-

"हरिश्चन्द्र: समय के साथ चलने में ही हमारा कल्याण है व्यास जी। जब हमें अंग्रेजी रमणी लोग भेद- सिंचित केश राशि, कृत्रिम कुंतल जूट, मिथ्या रत्नाभरण और विविध वर्ण वसन से भूषित निज-निज पति गण के साथ प्रसन्न बदन इधर से उधर फर-फर करती पुतली की भांति फिरती हुई दिखलाई पड़ती हैं, तब हमें इस देश की सीधी-सादी स्त्रियों की हीन अवस्था का स्मरण हो आता है।

व्यास जी: तो क्या आप चाहते हैं की इन गौरांगी युवती-समूह की भांति हमारी कुल-लक्ष्मीगण भी लज्जा को तिलांजलि देकर अपने पतियों के साथ घूमें।

हरिश्चंद्र: हम स्वप्न में भी यह इच्छा नहीं रखते। हम तो यह चाहते हैं कि जिस भांति अंग्रेजी स्त्रियाँ सावधान होती हैं, पढ़ी लिखी होती हैं, अपने संतानगण को शिक्षा देती हैं, अपनी जाति और देश की संपत्ति और विपत्ति को समझती हैं, उसमें सहायता देती हैं, व्यर्थ गृहदास्य और कलह में समय नहीं खोतीं- उसी तरह हमारी देवियाँ भी वर्तमान हीनावस्था से उबरकर उन्नति करें।" [8]

स्पष्ट है की हरिश्चंद्र भारतीय स्त्रियों को आत्मनिर्भर एवं स्वावलंबी होने की बात करते हैं। किसी भी देश की राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान उस देश की राष्ट्रभाषा होती है। वर्तमान में भारत की भले ही कोई एक राष्ट्रभाषा ना हो किंतु यह निसंदेह कहा जा सकता है कि हिंदी ही भारत की सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाली भाषा है। नाटक युगावतार में भी हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने की बात कही गई है, यह तो सर्वविदित है कि भारतेंदु निज भाषा की उन्नति के हितैषी एवं प्रबल पक्षधर थे। इस नाटक में भी उनका हिंदी भाषा के प्रति प्रेम एवं लगाव दृष्टिगोचर हुआ है। जब वह एक स्थान पर कहते हैं- "देश के दुर्भाग्य की एक और सूचना आई है, व्यास जी हिंदी राष्ट्रभाषा नहीं बनाई जाएगी।" [9] अपने गुरु राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद द्वारा किए जा रहे हिंदी विरोध के प्रति भी वे चिंता व्यक्त करते हैं, हरिश्चंद्र और व्यास जी के निम्न संवाद में यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है-

"हरिश्चंद्र: "राजा साहब हमारे गुरु हैं, हम हृदय से उनका आदर करते हैं- पर राजा साहब देश के हित को नहीं पहचानते। निजी स्वार्थ के आगे वे देश के स्वार्थ को छोटा समझते हैं।

"व्यासजी: वे आप की तरह से तो सोचते नहीं न बाबू साहब! उनको तो लगता है कि इतनी छोटी आयु में हरिश्चंद्र को इतना मान-सम्मान क्यों मिल गया। वे मात्र विरोध के लिए अपना विरोध करते हैं।

हरिश्चंद्र: (खींझकर हाथ मलते हुए) इतने विद्वान होकर भी वह क्यों नहीं समझ पाते कि देश की भलाई उसकी शुभ परंपराओं की रक्षा करने में ही है। हम उर्दू के प्रेमी हैं, उसमें कविताएं भी रचते हैं, हमारा किसी भी भाषा से विरोध नहीं है। अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि सभी भाषाओं का हम स्वागत करते हैं, परंतु एक क्षण के लिए भी हम यह नहीं भूल पाते कि-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल ।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को सूल।।" [10]

'युगावतार' नाटक में भारतेंदु हरिश्चंद्र की व्यक्तित्व के कई अन्य पहलुओं को उद्घाटित किया गया है। उनमें जहां एक ओर तत्कालीन ब्रिटिश शासन के प्रति राजभक्ति का भाव मिलता है, वहीं भारतीय समाज की दीन-हीन दशा के प्रति चिंता भी है। उनमें निजभाषा प्रेम तथा देश-प्रेम की तीव्र भावना भी मिलती है। इसीलिए वे महारानी विक्टोरिया की नाराजगी से भी भयभीत नहीं होते।

"हरिश्चंद्र: (उत्तेजित होकर) रानी रूठेगी अपना सुहाग लेगी 'कवि वचन सुधा' की सौ प्रतियां सरकार लेती है, वह न लेगी और क्या ? हम अंग्रेज सरकार के शत्रु नहीं परंतु देश के भी शत्रु नहीं हो सकते। कोई शक्ति हमें सत्य कहने से नहीं रोक सकती।.....

परम प्रतापी अँग्रेज सरकार के राज्य में हमें सब सुख है, परन्तु यह होते हुए भी दासता दासता ही रहेगी। हमारे देश का सारा धन बिलायत खींचे जा रहा है- और हम भी विवश हैं। माता-पिता का अनन्य पुजारी भारत देश इच्छा रहते हुए भी हिंदी माता को स्वयं अपने ही घर से पूजा का आसन नहीं दे सकता ।यह विवशता क्या छिपाए रखने की वस्तु है?- हम रुकना नहीं जानते, हमें कोई रोक भी नहीं सकता। इस नई चाल की हिंदी का प्रचार करने के लिए हम अपना तन-मन-धन अर्पित कर देंगे। हिंदी विदेशी राजा की राज-भाषा भले ही ना हो, पर भारत देश की भाषा तो वह है ही और देश जागकर ही रहेगा।" [11]

नाटक में भारतेंदु हरिश्चन्द्र के व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण विशेषता उनकी दानशीलता का भी वर्णन मिलता है। एक दीन-हीन ब्राह्मण की कन्या जो विवाह योग्य हो गई है, किंतु गरीबी के कारण उसका विवाह करने में ब्राह्मण पिता अक्षम है। अनेक दान देने वाले सेठ तथा बनियों की चौखटों पर माथा टेकने के बाद वह गरीब ब्राह्मण जब हरिश्चंद्र के पास पहुंच कर अपनी व्यथा सुनाता है तथा मदद के लिए पाँच सौ रुपये की बात कहता है, इस पर हरिश्चंद्र जो पहले से ही क़र्ज़ में डूबे हुए हैं अपने मुनीम जी को सात सौ रुपये ब्राह्मण को देने के लिए कहते हैं। इस प्रकार यह सच है कि दीनों को दान देने में तथा गुणीजन को पुरस्कृत करने में हरिश्चंद्र का कोई सानी नहीं मिलता। नाटक के पात्र व्यास जी भारतेंदु के चरित्र के बारे में कहते हैं- "बाबू साहब! आपके धन से देश की जो अमूल्य सेवा हो रही है वह और किसके द्वारा हो रही है? धनाधीश तो लाखों पड़े हैं, परंतु किसे चिंता है कि देश का उद्धार करने के लिए राष्ट्र भारती हिंदी को बढ़ावा दें। स्वदेशी वस्त्रों और वस्तुओं के प्रचार का महत्व आपके सिवा और कौन पहचानेगा " [12]

भूमंडलीकरण के चलते आज विश्व के अधिकांश देशों की अर्थव्यवस्था परस्पर एक दूसरे पर निर्भर हो गई है। उदारवादी व्यवस्था के कारण विभिन्न देशों ने आज भारतीय बाजार को अपने नियंत्रण में ले लिया है, आज विदेशी उत्पादों का आकर्षण भी

भारतीय जनमानस को चकाचौंध किए हुए है। आज विदेशी ब्रांड 'स्टेटस सिंबल' बन गया है । ऐसे में स्वदेश में निर्मित उत्पादों के प्रति उदासीनता और उपेक्षा का वातावरण बनता जा रहा है। आजादी के आंदोलन में गांधीजी ने स्वदेशी अपनाने का नारा दिया था। गांधी से पहले हिंदी के साहित्यकारों ने स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने तथा विदेशी वस्तुओं के त्याग के प्रति जनता को जागृत किया । आलोच्य नाटक 'युगावतार' में भी नाटककार अमृतलाल नागर जी ने भारतेंदु हरिश्चंद्र के माध्यम से स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने की बात कही है-

"व्यास जी:..... स्वदेशी वस्त्रों और वस्तुओं के प्रचार का महत्व आपके सिवा और कौन पहचानेगा ? आपके सिवा और कौन पीड़ा के साथ यह अनुभव करेगा कि–

मारकीन मलमल बिना चलत कछू नहिं काम।
परदेसी जुलाहन के मानहु भये गुलाम ।।

हरिश्चंद्र: केवल मारकीन मलमल ही नहीं व्यास जी, धन और ऐश्वर्य की अंधी महत्ता के साथ-साथ स्वदेश पर लादी जाने वाली जड़ता अकर्मण्यता को भी अब हम पहचान रहे हैं । हम देखते हैं कि-

वस्त्र कांच क़ागज क़लम चित्र खिलौने आदि।
आवत सब परदेश से नितहिं जहाजन लादि।।

हम स्पष्ट देख रहे हैं, यदि इस प्रकार विदेशी वस्तुओं का आना जारी रहा तो भारत एक दिन सब प्रकार से पंगु होकर नष्ट हो जाएगा। [13]

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि भारतेंदु हरिश्चन्द्र का पारिवारिक जीवन अंतर्कलह एवं विषाद ग्रस्त ही रहा, पैतृक संपत्ति को दोनों हाथों खर्च करना, जिसके कारण विमाता एवं भाई से मतभेद एवं विरोध था। इसके बावजूद सामाजिक जीवन में वे अति सक्रिय थे, उनकी दैवी प्रतिभा को संकीर्ण पारिवारिक कलह ने कुंठित नहीं होने दिया। ऋण के भार ने उनकी दान वृद्धि को बाधित अवश्य कर दिया, किंतु देश में अकाल पड़ने की स्थिति में भारतेंदु हरिश्चंद्र अकाल-ग्रस्त लोगों की सेवा एवं रक्षा करने का संकल्प लेते हैं- "हरिश्चंद्र आज निर्धन है- किंतु हरिश्चंद्र असहाय नहीं। हम गली-गली, घर-घर, घूम-घूम कर अपने अकालग्रस्त स्वदेश बंधुओं के लिए धन एकत्र करेंगे। हम इसी क्षण अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ेंगे ।" [14] सेवा भाव का संकल्प लिए नाटक के अंतिम अंक में हरिश्चंद्र नंगे सिर, कुर्ता व चूड़ीदार पायजामा पहने हाथ में नारियल का खप्पर लेकर अकाल पीड़ितों के लिए भीख माँगते नज़र आते हैं। नाटक यहीं पर समाप्त हो जाता है।

समग्रतः 'युगावतार' नाटक में भारतेंदु हरिश्चंद्र का व्यक्तित्व विशिष्ट ढंग से चित्रित हुआ है। उनके जीवन की अनेक विध घटनाओं को जोड़ते हुए इस नाटक का कथ्य निर्मित हुआ है। वास्तव में समाज और साहित्य सेवा ही उनके जीवन का लक्ष्य रहा। अनेक विद्यालय, अनाथालय विभिन्न सामाजिक-साहित्यिक संस्थाओं की स्थापना करना, कविता वर्धिनी सभा, सभा-संगोष्ठियों, महफ़िलों का आयोजन, विधवाओं की स्थिति सुधारने तथा लड़कियों आदि की शिक्षा के प्रति कार्यरत होना, ये सभी क्रिया कलाप उनके व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। हरिश्चन्द्र जैसा उदार हृदयी, परोपकारी, साहित्य एवं देश प्रेमी एवं गुण ग्राहक व्यक्तित्व मिलना आज संभव नहीं।

संदर्भ

1. अमृतलाल नागर रचना संचयन- सं० शरद नागर, पृ० 941
2. वही, पृ० 942
3. वही, पृ० 942
4. भारतेन्दु हरिश्चंद्र- ब्रजरत्न दास, पृ० 134
5. अमृतलाल नागर रचना संचयन- सं० शरद नागर, पृ० 957
6. वही, पृ० 948
7. वही, पृ० 950-51
8. वही, पृ० 949
9. वही, पृ० 949
10. वही, पृ० 951-52
11. वही, पृ० 953
12. वही, पृ० 953
13. वही, पृ० 963